सौभाग्य

हिन्दी ADDA

अनुराग शर्मा

सौभाग्य

कब से बिस्तर पर लेटे हुए मैं सिर्फ करवटें बदल रही थी। नींद तो मानो कोसों दूर थी। करिश्मा को सोते हुए देखा। कितनी प्यारी लग रही थी। इतने जालिम बाप की इतनी प्यारी बच्ची। सचमुच कुदरत का करिश्मा है। इसीलिए मैंने इसका यह नाम रखा। इसके बाप का बस चलता तो कोई पुराने जमाने का बहन जी जैसा नाम ही रख देते। सारी उम्र जिल्लत सहनी पड़ती मेरी बच्ची को। खुद मैं भी तो रोज एक नरक से

गुजरती हूँ। कितना भी भुलाना चाहूँ, हर रात को दिन भर की तल्ख बातें याद आती रहती हैं। आज की ही बात लो, कितनी छोटी सी बात पर कितना उखड़ गए थे।

"टिकेट बुक कराया?"

"हाँ!"

"तुमने तो **8500** कहा था। अब ये **12000** कहाँ से हो गए?"

चुप्पी।

"और ये सप्ताह के बीच में, इतवार का टिकेट क्यों नहीं लिया?"

चुप्पी।

"चार दिन का नुकसान करा दिया? चार दिन की कीमत पता है तुम्हें?"

चुप्पी।

इतना ही ख्याल है तो खुद क्यों नहीं कर लिया। माना मैं पूरे हफ्ते से छुट्टी पर हूँ। इसका मतलब यह तो नहीं कि एक नौकरानी की तरह इस आदमी का हर काम करती रहूँ। अपने मायके में तो मैंने कभी खाना भी नहीं बनाया। हर काम के लिए नौकर-चाकर थे। इनको तो यह भी पसंद नहीं। कितनी बार ताना देकर कहते हैं कि रिश्वत की शान-शौकत के सामने तो मैं भूखा रहना ही पसंद करूँगा। तो रहो भूखे, मुझे और मेरे बच्चे को तो हमारा पूरा हक दो। उसके बाद जो चाहे करो। मैंने क्या-क्या कहना चाहा मगर पिछले कड़वे अनुभवों के कारण मन मारकर चुप ही रही।

सोचते-सोचते पता नहीं कब नींद आ गई। सुबह उठी तो सर दर्द के मारे फटा जा रहा था। आखिरी छुट्टी भी आज खत्म हो गई। पैर पटक कर दफ्तर के लिए निकलना ही पड़ा। हमेशा ऐसा ही होता है। जबरदस्ती कर के अपने को उठाती हूँ तब भी बस छूट जाती है। आखिरकार टैक्सी करनी पड़ी। और ये दिल्ली के टैक्सी वाले। ये तो लगता है माँ के पेट से ही गुंडे बनकर पैदा हुए थे। कोई लाज-लिहाज नहीं। अकेली औरत देखकर तो कुछ ज्यादा ही इतराने लगते हैं।

दफ्तर पहुँचते-पहुँचते साढ़े दस बज ही गए थे। चीफ मैनेजर दरवाजे पर ही खड़ा था। बुड्ढे को कोई और काम तो है नहीं। बीच में खड़ा होकर सुकुमार कन्याओं को ताकता रहता है। मुझे देखते ही अजब सी मुस्कराहट उसके चेहरे पर नाचने लगी। घिन आती

है मुझे उसकी मुस्कराहट से। न मुँह में दाँत न पेट में आँत। खिजाब लगाकर कामदेव बनने की कोशिश करता है। सींग कटाने से बैल बछड़ा थोड़े ही हो जाएगा।

"तो आ गईं आप!" बुड्ढे ने हमेशा की तरह ताना मारा, "मुझे लगा छुट्टी पर हैं आज भी।" बदतमीज कहीं का!

फ्यूचरटेक वाला जैन मेरे पहुँचने से पहले ही मेरी सीट पर पहुँच गया, "मैडम मेरी बिल पहले डिसकाउंट कर दीजिए, नहीं तो पार्टी कानूनी कार्रवाई शुरू कर देगी।" यह आदमी हमेशा कानूनी कार्रवाई की ही धमकी देता रहता है। इतना ही डर है तो अकाउंट में पहले से पैसा रखा करो ना। सबने सर पर चढ़ा रखा है। मंत्री जी का साला जो ठहरा। सारे अकाउंट ऊपर से ही तैयार होकर आते हैं हमारे पास तो साइन करने के अलावा कोई चारा ही नहीं होता है। जल्दी-जल्दी उसका काम किया। दोपहर तक फ्यूचरटेक का खाता फिर से ओवर हो गया।

लंच करने बैठी तो पहले ही कौर में दाँत के नीचे कंकर आ गया। खाने का सारा मजा किरकिरा हो गया। तब तक राम बाबू आ गया। यह हमारा चपरासी है। चीफ मैनेजर से कम बदतमीज नहीं है। उससे कम समझता भी नहीं है अपने को। पढ़ा-लिखा नहीं है। पढ़ाई की कसर फैशनेबिल कपड़ों से पूरी करने की कोशिश में लगा रहता है। है तो चपरासी ही और शायद सारी उम्र चपरासी ही रहे लेकिन खूबसूरती में अपने को ऋतिक रोशन से ज्यादा सुंदर समझता है। हमेशा कुछ न कुछ कमेंट करता रहेगा। मेरी तरफ बढ़ा तभी मैं समझ गई कुछ बकवास करने वाला है। और ठीक वही हुआ।

उसने अपना बड़ा सा मुँह खोला, "मैडम आप न जींस में बहुत अच्छी लगती हैं, रोजाना ही जींस पहनकर आया करिए। एकदम टिप-टॉप लगेंगी।"

मुझे इतना गुस्सा आया कि उसी वक्त खाने की प्लेट छोड़कर उठ गई।

वापस अपनी सीट पर आई ही थी कि फोन घनघनाया। "क्या प्रीति मैडम से बात कर सकता हूँ?" पूरे दिन में पहली बार किसी ने इतनी सभ्यता से बात की थी। अच्छा लगा। आवाज भी अच्छी लगी, कुछ हद तक जानी पहचानी भी।

"मैडम आपसे एक जानकारी चाहिए थी।"

"हाँ, पूछिए", पूरे दिन में अब मैं पहली बार सामान्य होने लगी थी।

"क्या आप किसी आदित्य रंजन को जानती हैं?"

उस सभ्य आवाज ने आदित्य कहा तो मेरा सारा शरीर एकबारगी पुलकित सा हो गया। यह नाम सुनने को मेरे कान तरस रहे थे। और मेरे होंठ भी पिछले दस सालों में कितनी बार अस्फुट स्वरों में यह नाम बोलते रहते थे। वही गंभीर स्वर, वही मिठास और वही शालीनता, मुझे यह पहचानने में एक पल भी नहीं लगा कि यह आदित्य ही है।

"बदमाश, कहाँ हो तुम?" बस यही वाक्य ठीक से निकला। गला काँपने लगा था।

"कहाँ खो गए थे तुम? पता भी है मैं किस हाल में हूँ? कितनी अकेली और उदास हूँ?" कहते-कहते मेरी रुलाई फूट पड़ी।

"मैं काम से नौसेना मुख्यालय आया था। पुरानी यादें ढूँढ़ने कनॉट प्लेस आया तो अरविंद मिल गया। उस से तुम्हारा सब हाल मिला। उसी ने तुम्हारा नंबर दिया और बताया कि तुम्हारी ब्रांच नजदीक ही है। सुनो... प्लीज रो मत। मैं पाँच मिनट में आ रहा हूँ।"

उसे आज भी मेरा इतना ख्याल है, यह जानकर अच्छा लगा। वह आज भी उतना ही भला था, उसकी आवाज में आज भी वही शांति थी जिसे मैं अब तक मिस करती रही थी।

फोन पर उसकी आवाज क्या सुनी, मानो मैं किसी टाइम मशीन में चली गई। अपने जीवन में से कितनी भूली-बिसरी पुरानी यादें जैसे अब तक जबरन बंद रखी गई खिड़कियों से उड़कर मेरे मन-मंदिर में मँडराने लगी। याद आए वो दिन जब हर पल आशा से बँधा था। मुझे हर रोज सुबह होने का इंतजार रहता था - ताकि उससे मिल सकूँ। उसके संग की खुशबू को बरसों बाद फिर से महसूस किया तो चेहरे पर स्वतः ही मुस्कान आ गई।

कॉलेज में वह सब का चहेता था। मैं भी किसी से कम नहीं थी। वह खिलाड़ी था तो मैं पढ़ाकू थी। जान-पहचान कब नजदीकी में बदली, पता ही न लगा। मैं बहुत हाजिर-जवाब थी जबकि वह चुप सा था। और भी बहुत से अंतर थे हमारे बीच में। मसलन हम लोग खाते-पीते घर से थे जबकि उसका परिवार बड़ी मुश्किल से ही निम्न-मध्य वर्ग में गिना जाने लायक था। उसके पास अपनी साइकिल भी नहीं थी जबकि मुझे कॉलेज छोड़ने ड्राइवर आता था। हालाँकि, बाद में मैंने जिद करके बस से आना-जाना शुरू कर दिया था। अब सोचती हूँ तो यह सपने जैसा लगता है कि इतने भेद के बावजूद हम दोनों धीरे-धीरे एक-दूसरे के रंग में रंग गए। मेरी सहेलियाँ शाम

होते ही मुझे अकेला छोड़ देती थी ताकि मैं उसके साथ समय बिता सकूँ। सुनयना तो हमेशा ही उसका नाम मेरे साथ जोड़कर कुछ न कुछ चुहल करती रहती। कॉलेज में सबको यकीन था कि हम शादी करेंगे ही।

हम दोनों करोल बाग में एक छोटे से होटल में बैठे थे। मैं अपने परिवार की एल्बम ले गई थी। वह एक-एक फोटो को बड़े ध्यान से देख रहा था। टेढ़े-मेढ़े फोटो को एल्बम से निकालकर फिर वापस व्यवस्था से लगा देता। पापा के फोटो को उसने बिना बताए ही पहचान लिया।

"यह तो एक प्यारी सी बच्ची के पापा ही हैं...?"

"दिल कर रहा है कि अभी चरण छूकर आशीर्वाद ले लो, है न?"

हम दोनों ही खुलकर इतना हँसे कि आसपास की टेबल पर बैठे लोग मुड़कर हमें देखने लगे।

मुझसे विदा लेना उसे कभी अच्छा नहीं लगता था। पर उस दिन वह कुछ ज्यादा ही भावुक हो रहा था।

"थोड़ी देर और रुक जाओ न" उसने विनती की।

"आखिरी बस निकल गई तो फिर घर कैसे जाऊँगी?"

"काश हम लोग हमेशा साथ रह पाते" उसने एक ठंडी आह भरते हुए कहा।

"भूल जाओ, पापा इस शादी के लिए कभी भी तैयार नहीं होंगे" मैंने चुटकी ली। मुझे क्या पता था कि मेरा यह मजाक ही एक दिन मेरी जिंदगी का सबसे कड़वा सच बन जाएगा।

हम दोनों पार्क में बैठे थे। वह मेरे बालों से खेल रहा था। पता ही न चला कब अँधेरा हो चला था। अचानक ही मुझे पापा का रौद्र रूप याद आया। "क्या समय है?" मैंने पूछा।

"मुझे क्या पता, मैं तो घड़ी नहीं बाँधता हूँ।"

"हाँ वह तो दहेज में मिलेगी ही" मैंने छींटा कसा।

"मेरा दहेज में विश्वास नहीं है" उसे मेरी बात अच्छी नहीं लगी।

"रहने दो, पंडितों को तो बस लेना ही लेना आता है।"

कहने के बाद मुझे अहसास हुआ कि मुझे ऐसा नहीं कहना चाहिए था। मैं यह सोच ही रही थी कि उसकी आवाज से मेरी तंद्रा भंग हुई।

"क्या चल रहा है प्रीति जी? सब ठीक तो है? करिश्मा का क्या हाल है? पढ़ाई में तो अपनी माँ की तरह ही होशियार होगी? राइट?"

उसके मुँह से "जी" सुनकर थोड़ा अजीब सा लगा। शायद मुझे सहज करना चाहता था। मैंने भी संयत दिखने का पूरा प्रयास किया लेकिन अपनी सारी शक्ति लगाकर भी मैं उसके किसी भी प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकी। गला और आँख दोनों ही भर आए।

उसने भी दोबारा नहीं पूछा। उसने अपनी नजरें भी नीची कर ली ताकि मैं चुपचाप छलक आया एक आँसू पोंछ सकूँ। मुझे अच्छा लगा। वह आज भी वैसा ही कोमल हृदय है। हमेशा ही दूसरों को पूरा मौका देता है सर्वश्रेष्ठ दिखने का।

मेरे उत्तर का इंतजार किए बिना उसने अपने आप ही कहा, "लंच टाइम हो रहा है, सोना-रूपा में चलें? तुम्हें पसंद भी है।"

हम दोनों जल्दी से बाहर निकले। लंच में मूड खराब हो जाने की वजह से मैं भूखी तो थी ही। मगर उसके साथ होने की बात ही और थी। मेरे कदम कुछ अधिक ही तेज चल रहे थे। आज बहुत सालों के बाद वह मेरे साथ चल रहा था। बिल्कुल वैसे ही जैसे शादी से पहले हम लोग घूमा करते थे।

वह तो स्वभाव से ही निडर था। कभी भी किसी की परवाह नहीं करता था। मगर मुझे तो घर में सबका ही ख्याल रखना था। दीदी ने माँ-बाप की इच्छा के विरुद्ध घर त्यागकर दूसरी जाति में शादी की थी। एक साल बाद भाई ने भी घर में सबके बहुत मना करने के बाद भी लड़-झगड़ कर हमारी हैसियत से कहीं नीचे परिवार में विवाह कर लिया। पापा ने उसी दिन उसको अपनी संपत्ति से बेदखल कर दिया और मुझसे वचन ले लिया कि मैं अपनी मर्जी से शादी नहीं करूँगी। इस बात को बहुत समय हो गया था। पापा ने दीदी और भइया को वापस स्वीकार भी कर लिया था। मुझे लगा कि सब कुछ ठीक हो गया है। ऊपर से आदित्य का प्यार। मैं तो पापा को दिए इस वचन को पूरी तरह भूल भी गई थी।

एक दिन मैंने पापा को आदित्य के बारे में सब कुछ सच-सच बता दिया। उसी क्षण मेरी जिंदगी हमेशा के लिए बदल गई। पापा का वह भयानक रूप मैं कभी भूल नहीं

सकती। उस समय रात के ग्यारह बज रहे थे। उन्होंने उसी वक्त मुझे घर से निकल जाने को कहा। मैंने बहुत समझाने की कोशिश की मगर उन पर तो जैसे भूत सा सवार था। अब याद करके भी आश्चर्य होता है कि हमेशा अपनी शर्तों पर जीने वाले दीदी और भैया भी इस बार पापा की ही तरफदारी कर रहे थे।

दीदी और भैया ने अपनी बातों से मुझे बार-बार यह यकीन भी दिलाया कि अपने दोनों बड़े बच्चों द्वारा अपनी मर्जी से विवाह कर लेने की वजह से माँ-पापा पहले ही बहुत टूट चुके हैं। अगर मैं भी उनकी इच्छा का ख्याल नहीं करूँगी तो वे लोग गुस्से में न जाने क्या कर बैठें। अगर कुछ उलटा-सीधा हो गया तो घर का कोई भी सदस्य मुझे कभी माफ नहीं करेगा।

पापा के गुस्से के अलावा मुझे एक और बात का भी डर था। वह था हमारी जातियों का। आदित्य एक सुसंस्कृत ब्राह्मण परिवार से था और मुझे कालेज में प्रवेश भी आरक्षित कोटा में मिला था। दीदी हमेशा कहती थी, "यह पंडे-पुजारी बड़े ही दोगले होते हैं। जिस दिन भी उसे तेरी जाति का पता लगेगा, दूध की मक्खी की तरह निकाल कर फेंक देगा।" हालाँकि मुझे यकीन था कि आदित्य ऐसा लड़का नहीं था मगर वक्त की धार किसने देखी है। अगर वह कभी भी दुनिया के बहकावे में आ जाता तो मैं तो कहीं की भी न रहती।

मैंने उसे फोन करके सारी बात बताई और कहा कि मैं पापा का दिल नहीं तोड़ सकती हूँ।

"तुम मुझे भूल जाओ हमेशा के लिए। समझो मैं मर गई।"

मुझे लगा कि वह कहेगा, "तुम्हारे लिए मैं सारी उम्र कुँवारा रहूँगा।" मगर उसने ऐसा कुछ नहीं कहा।

"ऐसा कैसे हो सकता है? तुम उनकी बेटी हो प्रोपर्टी नहीं। नहीं मानते तो न मानें। हम उनके बिना ही शादी करेंगे।"

"उनके बिना? अभी तो शादी हुई भी नहीं है, तुम पहले ही मुझे अपने परिवार से अलग करना चाहते हो?" मुझे उसकी बात बिल्कुल भी अच्छी नहीं लगी।

"नहीं, मैं उनकी और इंसल्ट नहीं कर सकती" शायद मैं बहुत कमजोर थी - या शायद मैं दीदी-भैया की तरह स्वार्थी नहीं होना चाहती थी। कारण जो भी हो, मैं उसी समय यह समझ गई थी कि मैं अपने परिवारजनों को नाराज नहीं कर पाऊँगी।

"शायद हमारा साथ बस यहाँ तक ही था। आज से हमारा रिश्ता खत्म।" मैंने जैसे तैसे कहा।

मुझे लगा वह झगड़ा करेगा, मुझे बुरा भला कहेगा। मगर उसने ऐसा कुछ भी नहीं किया। उसने चुपचाप फोन रख दिया। उस दिन के बाद मैंने जब भी उसका नंबर मिलाने की कोशिश की उसने फोन कभी उठाया ही नहीं।

दो हफ्ते बाद हम सुनीता के घर में मिले। उसने बताया कि उसने नौसेना की नौकरी स्वीकार कर ली थी और वह उस दिन ही मुंबई जा रहा था।

"चिट्ठी लिखोगे न?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"इतनी तो लिखी, कभी किसी का जवाब तक नहीं आया। और फिर अब चिट्ठी लिखने की कोई वजह भी तो नहीं बची है।"

वह सच ही तो कह रहा था। मैंने कभी भी उसके पत्र का जवाब नहीं दिया। सोचती थी कि वह कभी भी बुरा नहीं मानेगा। उस दिन मैं सारी रात रोती रही। दीदी मुझे दिलासा दिलाते हुए हमेशा कहती थी, "अच्छा ही हुआ उसका यह पलायनवादी रूप शादी से पहले ही दिख गया, शादी के बाद तुझे अकेला छोड़कर चल देता तो क्या करती?"

भाभी ने भी समझाया, "सच्चा प्यार करने वाले इस तरह मँझधार में छोड़कर नहीं चल देते हैं।"

किताबों में, किस्से-कहानियों में भी हमेशा ऐसा ही पढ़ा था। मैं उसके जाने पर यकीन नहीं कर पा रही थी। मुझे उस पर अपने से भी ज्यादा विश्वास था। मुझे लगता था कि मैं चाहे कुछ भी करूँ, वह कभी भी मुझे छोड़कर नहीं जाएगा।

वह दिन और आज का दिन। वह मेरी जिंदगी से ऐसा गया कि फिर बहुत कोशिश करने पर भी पता ही न चला कि कहाँ है, कैसा है और किस हाल में है। मैंने भी धीरे-धीरे जिंदगी की सच्चाई को स्वीकार कर लिया। कभी किसी को यह अहसास नहीं होने दिया कि मेरे दिल के किसी कोने में वह आज भी रहता है, हँसता है और कविता भी करता है।

रणबीर के साथ मेरी शादी पापा के आशीर्वाद से हुई। कोई भी सहेली मेरी शादी में नहीं आई। सबको यही लगता था कि मैंने आदित्य के साथ अन्याय किया है। किसी को भी मेरे दिल का हाल जानने की फुरसत न थी। मुझे यकीन था कि वह तो आएगा ही। अरविंद के द्वारा मेरी खबर तो उस तक पहुँचती ही होंगी यह मुझे मालूम था। मगर वह भी न आया। उसकी तरफ से बस एक बधाई तार आया। बाद में भी उसकी कोई खबर न मिली। और कुछ नहीं तो आकर गुस्सा तो कर सकता था। मगर उसने गुस्सा भी नहीं किया और न ही कोई शिकवा। चुपचाप मेरी जिंदगी से चला गया। शादी के दो साल बाद करिश्मा पैदा हुई। दिन, मास और फिर वर्ष बीतते गए। करिश्मा स्कूल भी जाने लगी।

पुराने मित्रों में सिर्फ अरविंद से कभी कभार बस स्टॉप पर मुलाकात हो जाती थी। बाद में ऐसी ही किसी एक मुलाकात में अरविंद ने एक बार बताया कि आदित्य ने निशा से शादी कर ली। आदित्य और निशा - इससे ज्यादा बेमेल रिश्ता मैंने सुना न था। कहाँ आदित्य जैसा देवता आदमी और कहाँ एक नंबर की बदतमीज और नकचढ़ी निशा। बदतमीज क्यों न होती? चौधरी सुच्चा सिंह की बेटी जो ठहरी। चौधरी सुच्चा सिंह हमारी बिरादरी के सबसे नामी-गिरामी आदमी थे। बड़े-बड़े नेताओं से उठना बैठना था। वजह यह थी कि सारी बिरादरी के वोट उनके इशारे पर ही चलते थे। उनके प्रयासों से ही हम लोगों को आरक्षण मिला था। खानदानी पैसे वाले थे। सारा परिवार पढ़ा-लिखा भी था। कहते हैं कि भगवान सारे सुख किसी को भी नहीं देता है। बस उनके बच्चे ही खराब निकले। बड़ा बेटा गुंडागर्दी में पड़ गया। कॉलेज के दिनों में ही किसी हत्याकांड में भी उसका नाम आया था। उसके दोस्तों को सजा भी हुई थी। मगर कहते हैं कि चौधरी ने अपने रसूख के बल पर उसको साफ बचा लिया था। मुकदमे के दौरान ही उसे पढ़ने के बहाने इंग्लैंड भिजवा दिया था। अब तो वापस आने से रहा।

आदित्य के दादाजी चौधरी के परिवार के ज्योतिषी थे। चौधरी उनको बहुत मानते थे और कहते थे कि उनकी वजह से ही यह परिवार हमेशा चमका और कितना भी बुरा वक्त आने पर भी कभी संकट में नहीं पड़ा। निशा का बचपन से ही आदित्य के घर आना जाना था। आदित्य को भी उसके घर में सभी पसंद करते थे। और निशा भी हमेशा से किसी फौजी अफसर से ही शादी करना चाहती थी। फिर भी इस शादी पर मुझे अचंभा हुआ। निशा ने वह खजाना पा लिया था जो मेरे हाथ से फिसल चुका था। मुझे निशा से रश्क होने लगा। निशा ने जरूर पिछले जन्म में कोई बड़ी तपस्या की होगी। उस रात भी मुझे नींद नहीं आई। वह रात मेरी जिंदगी की सबसे लंबी रात थी।

"आँख से यह मोती क्यों गिरा, इसके बारे में, मुझे कुछ बताना चाहती हो?" उसने बिना किसी दृढ़ता के मुझसे पूछा।

पहले भी उसकी हर बात बिना किसी दृढ़ बंधन के होती थी। मुझे अच्छा नहीं लगता था। मैं चाहती थी कि वह मुझ पर अपना अधिकार जताए। अगर मैं उसकी बात का जवाब न दूँ तो वह जिद करके मुझसे दोबारा पूछे। अगर कभी वह मुझ पर गुस्सा भी करता तो शायद मुझे अच्छा ही लगता। मगर मेरी यह इच्छा कभी पूरी नहीं हुई। उसने कभी भी किसी बात की जिद नहीं की थी। न तो जिद करके अपने किसी सवाल का जवाब माँगा और न ही कभी मुझ पर गुस्सा हुआ।

तब मैंने उसके व्यक्तित्व के इस अंग को कभी नहीं सराहा। आज इतने साल बाद पहली बार मैंने उसके व्यवहार के इस बड़प्पन को समझा। पहली बार अपने आप को उसकी बराबरी का परिपक्व पाया। क्या रणबीर की तानाशाही में रहने के कारण ही मैं ऐसा समझ रही हूँ? या फिर मेरी उम्र ने मुझे विकसित किया है। जो भी हो, इतना सच है कि वह आज भी हमेशा जैसा था।

"तुम इतने दिन से मिले क्यों नहीं मुझसे? इतने साल तक मेरी कोई खबर नहीं ली? क्या कभी भी दिल्ली आना नहीं होता है?" लाख कोशिश करने पर भी मैं शिकवा किए बिना न रह सकी, "चिट्ठी न सही, फोन तो कर सकते थे कभी?"

वह शांति से सुनता रहा।

"मेरी याद नहीं आई कभी?" मैं बोलती रही।

"यादें कहाँ छूटती हैं? मिला नहीं तो क्या, तुम्हारी एक-एक बात आज भी याद है मुझे।"

"शादी के बाद अपनी मरजी के अलावा और भी बहुत सी बातें होती हैं जिनका ध्यान रखना पड़ता है। और क्या कहूँ, तुम तो खुद ही समझदार हो" उसने सफाई सी दी।

"नहीं, मैं तो बुद्धू हूँ। और यह बात मैं साबित कर चुकी हूँ रणबीर से शादी कर के।"

"मगर तुमने तो अपनी मरजी से शादी की थी?"

"वह मेरा बचपना था। मुझे रणबीर से कभी शादी नहीं करनी चाहिए थी।"

"तो क्या ऋतिक रोशन से?" वह मुस्कुराया, "उसी की फैन थी न तुम?"

कितने बरस बाद वह निश्छल मुस्कान देखने को मिली थी। मैं अपनी खुशी को शब्दों में बयाँ नहीं कर सकती।

"नहीं वह तो कुछ भी नहीं है मेरे परफेक्ट मैच के सामने।"

"कौन है वह खुशनसीब, जरा हम भी तो सुनें? "वह शरारत से मुस्कुराया।

"तुम, और कौन?" मैंने झूठमूठ गुस्सा दिखाते हुए कहा, "मेरे मुँह से अपनी तारीफ सुनना चाहते हो?"

"मैंने तुम्हें नहीं पहचाना। बहुत बड़ी गलती की। उसी की सजा आज तक भुगत रही हूँ।"

"ऐसा मत कहो प्रीति" उसकी मुस्कान एकदम से गायब हो गई। एक गहरा विषाद सा उसके चेहरे पर उतर आया। मैंने कभी भी उसे इतना उदास नहीं देखा था। मैं तो यह जानती भी नहीं थी कि वह कभी उदास भी दिख सकता है। मुझे समझ नहीं आया कि वह मेरी बात से आहत क्यों हुआ? मैंने तो उसकी तारीफ ही की थी।

"निशा कितनी खुशनसीब है जो उसे तुम जैसा पति मिला" मैं अपनी ही रौ में बोली।

"प्रीति, प्लीज ऐसा बिल्कुल मत कहो। यह सच नहीं है" वह ऐसे बोला मानो बहुत पीड़ा में हो। मुझे समझ नहीं आया कि वह इतना असहज क्यों हो रहा था।

"काश मैं निशा की जगह होती।" मेरे मुँह से निकल ही गया, "मैं कभी अपनी किस्मत से लड़ने की हिम्मत ही नहीं जुटा सकी। वरना हमारी दुनिया कुछ अलग ही होती।"

"तुम्हें लगता है कि तुम मेरे साथ खुश रहती?" वह एक पल को ठिठका फिर बोला, "तुम सोचती हो कि निशा मेरे साथ बहुत खुश है?"

मैं समझी नहीं वह क्या कहना चाह रहा था, वह कुछ उलझी-उलझी बातें कर रहा था।

"बिल्कुल भी खुश नहीं थी वह मेरे साथ। या तो झगड़ा करती थी या दिन रात रोती थी। मैंने एकाध बार मनो-चिकित्सक के पास जाने की बात भी उठाई तो वह और सारा चौधरी परिवार मेरे खिलाफ भड़क गया कि मैं उनकी बेटी को पागल कर देना चाहता हूँ।"

मैं उसके चेहरे की पीड़ा को स्पष्ट देख पा रही थी मगर नहीं जानती थी कि उसका क्या करूँ।

"प्रीति, यह दुनिया बहुत कठिन है। सही-गलत, अच्छे-बुरे को पहचानना आसान नहीं है। हमें सिर्फ अपने घाव दिखते हैं सुंदर-सुंदर कपड़ों के नीचे दूसरे लोग कितने घाव लेकर जी रहे हैं उसका हमें कतई एहसास नहीं है। इसलिए हमें दूसरों से ईर्ष्या होती है। सच तो यह है कि अपने सारे घावों के बावजूद हम दूसरों से ज्यादा खुशनसीब हो सकते हैं मगर हमें इस बात का जरा सा भी अंदाज नहीं होता है।"

मैं उसकी बात ध्यान से सुन रही थी।

"सुख दुख दोनों हमारे अंदर ही हैं।"

मुझे उसकी बात कुछ-कुछ समझ आने लगी थी।

"पता है हमारी समस्या क्या है?" उसने बहुत प्यार से कहा, मानो किसी बच्चे को समझा रहा हो, "झूठी उम्मीदों में फँसकर हम सच्ची खुशियों को दरकिनार करते रहते हैं।"

"अपूर्णता जीवन की कमी नहीं बल्कि उसका असली मतलब है। जीवन एक खोज है, एक सफर है। जीवन मंजिल नहीं है, यही जीवन की सुंदरता है। मौत संपूर्ण हो सकती है परंतु जीवन अधूरा ही होता है।"

"आधा-अधूरा जो भी मिले उसे अपनाना सीखना होगा। छोटी-छोटी खुशियाँ ही हमे बड़ा बनती हैं जबकि बड़ी-बड़ी उम्मीदें हमें छोटा कर देती हैं।"

"याद रखना कि अगर तुम्हारी शादी रणबीर से न हुई होती तो तुम्हें करिश्मा नहीं मिलती। अपने सौभाग्य को पहचानो, तभी खुशी मिलेगी।"

"निशा साथ में आई है?" मैंने पूछा, "क्या मैं उससे मिल सकती हूँ?" सोचती थी कि शायद मैं उसे अहसास दिला पाऊँ कि वह किस हीरे की बेकद्री कर रही है।

उसके चेहरे पर अजब सी उदास मुस्कान कौंधी और वह कुछ शब्द ढूँढ़ता हुआ सा लगा।

"निशा ने यह शादी सिर्फ अपने माता-पिता से विद्रोह करने के लिए की थी। उसने कई बार पुलिस बुलाई थी मुझ पर प्रताड़ना का आरोप लगाकर। मैं दहेज विरोधी एक्ट में

जेल भी गया। कुछ तो पुलिस-रिकार्ड की वजह से और काफी कुछ ससुर जी के प्रभाव की वजह से नौसेना ने डिस-ओनारेब्ल डिस्चार्ज देकर निकालने की कोशिश की मगर बाद में आरोप साबित नहीं हो पाए और आखिरकार मुझे बहाल किया। आज उसी सिलसिले में मुख्यालय आया था।"

"हे भगवान! कब हुआ था यह सब? "मुझे निशा पर बेहिसाब गुस्सा आ रहा था।

"कुछ साल पहले" उसने मुस्कुराते हुए कहा मानो कुछ हुआ ही न हो, "अब तो हमारा तलाक हुए भी एक साल हो गया।"

हम सोना-रूपा के सामने खड़े थे। मेरी भूख मर चुकी थी।